2024 TPJ | VOLUME 2, ISSUE 1
April - June | ISSN – 2584- 0517

समावेशी पर्यावरण संरक्षण : वैदिक दृष्टिकोण

राजेन्द्र कुमार शर्मा
सहायक निदेशक, शारीरिक शिक्षा एवं खेल, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर परिसर

भूमिका-

यह शोध पत्र वेदों में प्रतिपादित पर्यावरण संरक्षण के सिद्धान्तों को प्रस्तुत करता है। इसमें वेदों द्वारा प्रदर्शित पञ्चमहाभूतों के महत्त्व, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, जैविक व अजैविक घटकों के सन्तुलन पर बल दिया गया है साथ ही शोध पत्र भारतीय शास्त्रों में दिए गए विभिन्न नियमों और मार्गदर्शन को भी उजागर करता है। दिनचर्या एवं संस्कारों में पर्यावरण संरक्षण के तत्त्वों को समाहित किया गया है। प्राचीन भारतीय सभ्यता, जो कि वेदों की शाश्वत विद्या में मूलित है, प्रकृति के साथ सौहार्दपूर्ण सह-अस्तित्व और पर्यावरण संरक्षण की गहरी अंतर्दृष्टि प्रदान करती है। यह लेख वैदिक सिद्धांतों में गहरा गोता लगाता है जो मानव और प्राकृतिक जगत के बीच अंतर्निहित अंतरसंबंध को रेखांकित करते हैं, और सतत् जीवन के लिए एक समग्र ढांचा प्रदान करते हैं।

कीवर्ड्स- वैदिक ,पर्यावरण नैतिकता, पंचमहाभूत, ऋत, सतत् विकास

प्रस्तावना

भारतवर्ष एक चिन्तनशील राष्ट्र है। प्राचीनकाल से ही ऋषि-मुनियों ने अपने मस्तिष्क के आलोडन विलोडन से जनित ज्ञान को अनुभव की कसौटियो पर तराशकर भावी पीढ़ी तक पहुंचाया है। भाषा और लिपिज्ञान ने गुरुशिष्य की परम्परा में ईंधन का काम किया क्योंकि कागज के आविष्कार से पूर्व भारत में श्रुति परम्परा प्रचलित थी। श्रुति परम्परा एक ऐसी परम्परा है जिसमें आचार्य अपने शिष्यो को उदात्त-अनुदात्त- स्वरित आदि स्वरभेदों का ज्ञान हस्तसंचालन विधि द्वारा करवाते थे। फलतः यह सुदीर्घ वैदिक ज्ञान परम्परा आज भी अक्षुण्ण प्रचलित है। वेद मात्र धार्मिक ग्रन्थ ही नहीं है अपितु जनसामान्य के विभिन्न पहलुओं पर भी वेदऋचाएं प्रकाश डालती है। विडम्बना यह है कि जिस राष्ट्र में वेद प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किये जाते रहे है, उसी राष्ट्र में वेदो की उपादेयता पर आक्षेप लगाये जाते हैं। वेदो को मात्र पौरोहित्य कर्मकाण्ड की विषयवस्तु समझा जाने लगा है। पारलौकिक के साथ साथ इहलोक के ज्वलंत विषयों पर भी वेदों में चर्चा हुई है। यथा- कृषि, विवाह पद्धति, दर्शन, सृष्टिप्रलय, पर्यावरण शिक्षा,

2024 TPJ | VOLUME 2, ISSUE 1
April - June | ISSN – 2584- 0517

ऋत या नैतिक शिक्षा, वन्य जीव संरक्षण, वाक्तत्त्व, जल महत्त्व, वैश्वीकरण आदि।

"विषय विविधता" वेदों का यह विशिष्ट गुण है वेदों में अविद्या (इहज्ञान) के सम्यक् ज्ञान द्वारा हि विद्या (ब्रह्म ज्ञान) द्वारा मृत्यु को जीतकर अमृततत्त्व को प्राप्त करने का मार्ग बताया है –

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।।[1]

इस मंत्र का मूलभाव है कि जिस प्रकार नदी को तैरने के लिए नौका कि आवश्यकता होती है उसी प्रकार इस सांसारिक जीवन को जीने के लिए अविद्या (इहलोक का ज्ञान) की आवश्यकता पड़ती है। इहलौकिक ज्ञान को अगर एक शब्द में परिभाषित किया जाये तो वह शब्द है – भौतिक शरीर के चारों तरफ स्थित वातावरण का ज्ञान अर्थात् पर्यावरण शिक्षा।

यहाँ **परि** और **आङ्** उपसर्गपूर्वक वृञ्-वरणे धातु है। 'परि + आङ्. + वृञ्। परि अर्थात चारो ओर। भारतीय शास्त्रों ने बहुत पहले यह सिद्ध कर दिया था कि स्थूल शरीर का निर्माण पंचभूतों के सम्मिश्रण से हुआ है 1.आकाश, 2.वायु, 3.अग्नि, 4.आप, 5.पृथ्वी। जब मनुष्य का शरीर ही पंचघटकों से बना है तो उसका तो परम दायित्त्व बनता है पर्यावरण के इन सभी घटकों का संरक्षण करें।

वेदान्त दर्शन में पञ्च महाभूतों से स्थूल शरीर निर्माण की प्रक्रिया को पञ्चीकरण कहा जाता है-

द्विधा विधाय चैकैकं चतुर्धा प्रथमं पुनः।[2]

पञ्चीकरण के पांचो घटकों की अपनी-अपनी विशेषता है। जैसे आकाश में शब्दत्व। वायु में स्पृशत्व । अग्नि में रूपत्व। आप मे रसत्व। पृथ्वी में गन्धत्व।

इन पंचभूतो की परिभाषा की इनकी विशेषता है। पञ्चमहाभूतों से निर्मित शरीर को पर्यावरणीय व्यवस्था के अनुकूल रखना होता है इसे वर्तमान में मर्यादा, अनुशासन आदि शब्दों से और वैदिक काल में ऋत शब्द से व्यवहृत किया जाता था। ऋत अर्थात् नैतिक व्यवस्था में सभी मानव बंधे हुए है। देवता भी ऋत के नियमो का उल्लंघन नही कर सकते है, जल देवता वरुण को ऋत नियम का नियंत्रक कहा गया है क्योंकि मनुष्य में स्वभाववश ऋत उल्लंघन की प्रवृत्ति होती है - **सत्यमेव देवा अनृतं मनुष्याः।**

मनुष्य को अपनी प्रवृत्ति पर नियन्त्रण कर वातावरण के पाँचों घटकों की शुद्धता पर ध्यान देना चाहिए। अतः मनुष्य को ध्वनि प्रदूषण (आकाश) वायु प्रदूषण (वायु) जल प्रदूषण (जल) और मृदा प्रदूषण (पृथ्वी) आदि का निराकरण करना चाहिए।

यजुर्वेद (तैत्तिरीय) में पञ्च महाभूतों का क्रम इस प्रकार बताया गया है। **आकाशाद् वायुः, वायोः अग्नि, अग्नेः आपः, अद्भ्यः पृथ्वी।**

यह एक प्रकार का अन्योन्याश्रित संबंधित चक्र हैं। एक तत्व को दूसरे तत्व की आवश्यता रहती है। विज्ञान की भाषा में इसे पारिस्थितिकी तन्त्र भी कहते हैं।

[1] कठोपनिषद्
[2] वेदान्तदर्शन

2024 TPJ | VOLUME 2, ISSUE 1
April - June | ISSN – 2584- 0517

"मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः ।
माध्वीर्न सन्त्वोषधीः ।[3]

अथर्ववेद में कहा गया है कि शुद्धावस्था के घटक सम्पूर्ण पर्यावरण को शुद्ध कर पृथ्वी पर स्वर्गसम स्थिति उपलब्ध कराते है –

शुद्धाः सतीस्ता उ शुम्भन्त एव तानः
स्वर्गममि लोकं नयन्तु ।[4]

पृथ्वी पर हि स्वर्गमय वातावरण निर्माण अपेक्षित है क्योंकि रामायण में भी मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम अनुज लक्ष्मण से कहते है - **जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।** स्वर्ग से श्रेष्ठ बतायी गयी पृथ्वी को वेदों मे मातृस्वरूपा बताकर पुत्रवत् उसका दोहन करेन का सन्देश दिया गया है - **माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः ।**[5] जिस प्रकार शिशु अपनी माता को बिना पीडा पहुंचाये स्तनपान करता है उसी प्रकार एक मानव को भी पर्यावरण को बिना नुकसान पहुँचाये उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करना है।

पर्यावरण के घटक ;(Components of the Environment) पर्यावरण के मुख्यतः दो घटक होते है

i जैविक ii अजैविक

किसी भी क्षेत्र के वातावरण के निर्माता कारक निम्न होते है

- भौगोलिक स्थिति [अक्षांश, देशान्तर, पर्वत श्रृंखलाओं की 'दिशा, पठार, नदिया, समुद्रतल से ऊंचाई आदि।
- जलवायुवीय कारक (Climatic factors) तापमान, जलवाष्प, प्रकाश आदि।
- मृदीय कारक (Edaphic factors)
- जैविक कारक (Biotic factors)

जैवमण्डल का प्रत्येक घटक पारिस्थितिकी तंत्र में अपना अमूल्य स्थान रखता है चाहे वो मिट्टी का एक छोटा सा अणु (कण) ही क्यों ना हो। आग्नेय, अवसादी और कायान्तरित चट्टानो से बहता हुआ जल जलोढ़ मिट्टी का उपहार कृषकों को प्रतिवर्ष देता रहता है। काली मिट्टी, लाल मिट्टी, दोमट मिट्टी आदि सभी प्रकार की मिट्टीयाँ प्रकृति को विभिन्न औषधियो से अलंकृत करती है। उन औषधियों को वेदो में माता कहा गया है- **विश्वस्य मातरमोषधीनाम् ।**[6]

भारतीय संस्कृति ने वर्षों पूर्व वृक्षों पादपों और लताओं में जीवन की संकल्पना मानकर उनको सजीववत् पूज्य माना है। आज भी श्रेष्ठजन प्रतिदिन तुलसी, पीपल, बिल्ववृक्ष, केले, अशोक और आम आदि में जल देकर ही भोजन करते हैं- **भूम्यां असुरसृगात्मा क्वस्वित्**[7]

प्राचीन ऋषि मुनियों ने मनुष्य प्रवृत्ति को जानकर ही पर्यावरण संरक्षण जैसे विषयों को नित्य दिनचर्या का धार्मिक अंग घोषित किया था। परन्तु हमने आधुनिकता की नकल में ऐसी दिनचर्या को चुना है जिसमे पर्यावरण प्रदूषण को जन्म दिया है। वर्तमान समय में हो रहे

[3] ऋग्वेद 10.37.06
[4] अथर्ववेद 12.03.26
[5] अथर्ववेद (पृथ्वीसूक्त)
[6] अथर्ववेद 12.01.17
[7] अथर्ववेद 09.14.04

2024 TPJ | VOLUME 2, ISSUE 1
April - June | ISSN – 2584- 0517

पर्यावरण प्रदूषण के कारण और निम्न दुष्प्रभाव निम्न है – वनों की अंधाधुंध कटाई, ओजोन स्तर का घटना, जनसंख्या विस्फोट, द्रुत औद्योगिकीकरण, अम्लीय वर्षा, मृदा उर्वरकता में कमी, रेगिस्तान विस्तार, वर्षा की कमी, अनियमितता आदि।

यद्यपि पर्यावरण संरक्षण के लिए समय-समय पर कानूनों का निर्माण किया गया। जैसे-

- वन्य जीव संरक्षण अधिनियम-1972
- वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम – 1981
- जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम – 1974

परन्तु जब तक मनुष्य स्वयं अपने निजी जीवन में सुधार नहीं करता तब तक ये कानून कारगर नहीं होंगें। भारतीय संस्कृति ने मात्र जैविक ही नहीं अपितु अजैविक घटको में भी ईश्वर का वास मानकर इनका संरक्षण किया है –

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जिथा मा गृधः
कस्यस्विद्धनम् ॥[8]

यजुर्वेद संहिता का यह मंत्र हमें शिक्षा देता है कि जड़ चेतन सभी पदार्थों में ईश्वर का वास है, इस लोक में स्थित सभी पदार्थों का उपभोग त्याग की भावना से करना है। अर्थात पृथ्वी-जल- तेज-वायु-आकाश से उपलब्ध सभी तत्त्वों का उपभोग ऐसी भावना के साथ करना है कि हम अन्तिम उपभोक्ता नहीं है। अपितु आगे आने वाली पीढी भी इन संसाधनो का उपयोग कर सके । अतः भावी पीढ़ी के लिए पर्यावरण संरक्षण अत्यावश्यक है।

वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना के कारण ही हमारी संस्कृति प्राचीनतमा होकर भी समरस नूतना है। सम्पूर्ण विश्व को परिवार मानने के कारण ही भारतीय संस्कृति पर्यावरण संरक्षक के रूप में वैदिक काल से लेकर आज तक प्रतिबद्धता के साथ आगे बढ़ रही है।

यूनान मिस्र रोमां सब मिट गये जहाँ से।
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नही हमारी ॥[9]

भारतीय संस्कृति के ऐसे ही अनेक गुण संस्कृत ने अपने साहित्य में संचित करके अगली पीढी तक पहुंचाये है। इसके लिए एक ही माध्यम है और वो है- शिक्षा। प्राचीन काल से ही शिक्षा भारत के हर परिवार का अभिन्न अंग रहा है। संयुक्त परिवार प्रथा ने वृद्धजनों के विशाल अनुभव को कोमल बुद्धि बाले शिशु में अनायास ही प्रवेश करवाया है- **शिक्ष्यते उपादीयते विद्या यया सा शिक्षा।**[10]

शिक्षा अज्ञान से ज्ञान की ओर ले जाती है- **सा विद्या या विमुक्तये** । शिक्षक और शिष्य दोनो की उन्नति परस्पर सहभाव और सामञ्जस्य में निहित है- **सह नौ यशः । सह नो ब्रह्मवर्चसम् ।**

अन्तेवासी शिष्यों में चाहे वो राजपुत्र हो या सामान्य पर्यावरण कृषक पुत्र, सभी ने गुरुकुल में रहकर पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता को प्रत्यक्ष अनुभव किया है। यथा- यज्ञ हेतु समिधा संग्रहण (वृक्ष महत्त्व), पुष्प चयन (पादप

[8] ईशावास्योपनिषद्
[9] कवि इकबाल
[10] तैत्तरीयोपनिषद् 1.3

2024 TPJ | VOLUME 2, ISSUE 1
April - June | ISSN – 2584- 0517

महत्त्व), पार्थिव मूर्ति पूजन (मृदा महत्त्व), नदीजल अभिषेक (जल महत्त्व), सूर्य अर्घ्य, अग्नि पूजन (अग्नि महत्त्व), पृथ्वी पूजन (पृथ्वी महत्त्व), प्राणायामादि योग (वायु महत्त्व), दशदिश रक्षण (आकाश महत्व) इन सबका महत्त्व सही वैदिक पद्धतिमय जीवन जीने वाला ही जान सकता है।

ऋग्वेद में मनुष्य को निर्देश दिया गया है कि – **भद्रं जीवन्तो जरणामशीमहि**[11]। अर्थात् हम भद्र (सही) मार्ग पर चलते हुए पूर्ण आयु को प्राप्त करे। ऋग्वेद वेद के इस मन्त्र में वायु, जल, वनस्पति का महत्त्व सुस्पष्ट होता है। चेतन शक्ति होते हुए भी प्रकृति को सबसे ज्यादा नुकसान मनुष्य ने ही पहुंचाया है। वर्षों पूर्व संस्कृत साहित्य में अनेकशः पर्यावरण महत्त्व प्रतिपादित है। महाकाव्य का जो लक्षण साहित्य दर्पण में प्राप्त होता है उसमें भी प्रकृति वर्णन के बिना किसी काव्य को महाकाव्य नहीं माना गया है। विडम्वना है कि वर्तमान में कोई आधुनिक कवि अगर महाकाव्य को लिखना चाहे तो उसे प्रकृति वर्णन में प्रदूषण ही प्रदूषण दिखाई देगा। ना नदियाँ विमल जलयुक्त है, ना हि वायु प्रदूषण मुक्त।

प्राचीन समय से हि प्रत्येक सनातनी की दिनचर्या प्रकृति से जुडी हुई है। कहा भी गया है- **जायमानो वै ब्राह्मणस्त्रिभिर्ऋणवा जायते** । जन्म से ही मनुष्य पर तीन ऋणों का कर्ज हो जाता है उनके अनृणार्थ छह कर्म बताये गये है- **सन्ध्या स्नानं जपश्चैव देवतानां च पूजनम्। वैश्वदेवं तथाऽऽतिथ्यं षट् कर्माणि दिने दिने।** प्रातः काल उठते हि **कराग्रे वसते लक्ष्मी...** श्लोक द्वारा भूमि नमस्कार पृथ्वी का सम्मान और संरक्षण का सन्देश देता है। दातौन के लिए शास्त्रों में वनस्पति का निर्देश किया है

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशुवसूनि च।
बह्म प्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते ।।

ग्राह्य दातौन में चिड़चिड़ा गूलर, आम, नीम, वेल, कुरैया, करंज, खैर आदि को श्रेष्ठ माना है।

खदिरश्च करञ्जश्च कदम्वश्च वटस्तथा,
तिन्तिडी वेणुपृष्ठं च आम्ननिम्बौ तथैव च।
अपामार्गश्च बिल्वश्च अर्कश्चोदुम्बरस्तथा,
बदरीतिन्दुकास्त्वेते प्रशस्ता दन्तधावने ॥

ऐसे अनेको उदाहरण हमे हमारी शास्त्रोक्त दिनचर्या में मिलते है। हवन हेतु प्रयोग में ली जाने वाली भिन्न-भिन्न प्रकार की काष्ठ पर्यावरण शुद्धिकरण का एक माध्यम है। जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी को शास्त्रो में देवता का स्थान प्राप्त है। वर्षों से इन्हे सजीव मानकर व्यवहार किया जाता रहा है।

एक स्वच्छ वातावरण ही स्वच्छ विचार को जन्म देता है इसलिये हमें अपने आस-पास के बातावरण को शुद्ध और सात्विक बनाना चाहिए। एक शुद्ध पर्यावरण में ही हमारी प्रार्थना **जीवेम शरद : शतम्** फलीभूत हो सकती है, निश्चित और नियमित शास्त्रोक्त दिनचर्या का वर्तमान भागदोड भरी जिन्दगी से सामञ्जस्य बिठाते हुए हम **सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः**[12] का लक्ष्यप्राप्त कर सकते हैं।

[11] ऋग्वेद

[12] वाजसनेयी संहिता (यजुर्वेद)

2024 TPJ | VOLUME 2, ISSUE 1
April - June | ISSN – 2584- 0517

उद्देश्य (Objective):

शोध का मुख्य उद्देश्य वैदिक साहित्य में प्रतिपादित पर्यावरण नैतिकता के सिद्धांतों को विस्तार से प्रस्तुत करना है। यह प्रकृति और मानव के बीच अंतर्संबंध, पंचमहाभूतों का महत्व, ऋत की अवधारणा, प्राकृतिक तत्वों के प्रति आदर और दैनिक जीवन में पर्यावरण चेतना को उजागर किया है।

शोध प्रविधि-

द्वितीयक डेटा संकलन के माध्यम से शोध में वैदिक ग्रंथों, उपनिषदों और अन्य प्राचीन हिंदू शास्त्रों का गहन अध्ययन किया गया है। प्रासंगिक प्रमुख मंत्रों और वचनों का संकलन और विश्लेषण किया गया है। पर्यावरण संरक्षण से संबंधित विचारों, सिद्धांतों और जीवनशैली निदेर्शों को प्रस्तुत किया गया है।

शोध प्रश्न: मुख्य शोध प्रश्न यह है – क्या वैदिक साहित्य पर्यावरण संरक्षण और प्रकृति के साथ सामंजस्य से रहने के सिद्धांतों को प्रतिपादित करता है? यदि हां, तो ये सिद्धांत आज के समय में किस प्रकार प्रासंगिक हैं?

शोध ढांचा: शोध अध्ययन के लिए न केवल मूल वैदिक ग्रंथों जैसे ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद और ब्राह्मणग्रंथों का अध्ययन किया गया है, बल्कि वैदिक उपनिषदों, पुराणों, स्मृतियों और अन्य प्राचीन हिंदू धार्मिक साहित्य का भी गहन अनुशीलन किया गया है। साथ ही वैदिक साहित्य की व्याख्याओं और विद्वानों के अन्वेषणों का भी अध्ययन शामिल है।

विधियाँ-

इस शोध के लिए निम्नलिखित विधियों का अनुसरण किया गया है-

ग्रंथ समीक्षा, शास्त्रीय व्याख्या का अध्ययन, तुलनात्मक विश्लेषण, परंपरागत ज्ञान का समावेश।

यह शोध पद्धति जटिल प्रश्नों का समुचित उत्तर देने में सक्षम है, क्योंकि यह बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाती है और वैदिक ज्ञान से लेकर आधुनिक सिद्धांतों तक को शामिल करती है। इसके अलावा, परंपरागत ज्ञान और व्यावहारिक पद्धतियों को समाहित करने से यह शोध सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों दृष्टिकोणों को संतुलित करने में सक्षम होगा।

निष्कर्ष (Findings)-

शोध से पता चलता है कि वैदिक सिद्धांत मानव और प्रकृति के गहरे अंतरसंबंध को स्वीकार करते हैं। वे पंचमहाभूतों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश) के महत्व को रेखांकित करते हैं और उन्हें देवता के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। 'ऋत' की अवधारणा प्रकृति के साथ सामंजस्य से रहने की अपील करती है। वनारोपण, जल संरक्षण और प्रदूषण नियंत्रण जैसे उपायों पर जोर दिया गया है। वैदिक जीवनशैली में पर्यावरण चेतना समाहित है और दैनिक जीवन में प्राकृतिक संसाधनों का सतत उपयोग शामिल है।

2024 TPJ | VOLUME 2, ISSUE 1
April - June | ISSN – 2584- 0517

उपसंहार—

वेद पर्यावरण संरक्षण के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करते हैं। मानव और प्रकृति के बीच अंतर्निहित संबंध को स्वीकार किया गया है। मानव शरीर को पंचमहाभूतों का संयोग बताया गया है। प्राकृतिक तत्वों को देवताओं के रूप में व्यक्त किया गया है। प्रकृति के साथ सामंजस्य से रहना और प्राकृतिक संसाधनों का निरंतर उपयोग पर जोर दिया गया है।'ऋत' की अवधारणा ब्रह्मांड के नैतिक सिद्धांतों को दर्शाती है जिसमें पर्यावरण संरक्षण भी शामिल है।

सीमाएं और समस्याएं-

वर्तमान समय में जनसंख्या वृद्धि, औद्योगीकरण और उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण पर्यावरण पर बहुत दबाव है। वैदिक ज्ञान और परंपराओं का पालन करना आज की दुनिया में चुनौतीपूर्ण है।

सैद्धांतिक और व्यावहारिक निहितार्थ-

वैदिक ज्ञान समकालीन पर्यावरणीय चुनौतियों से निपटने और सतत विकास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। दैनिक जीवनशैली में पर्यावरण चेतना को समाहित करने से पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा मिलेगा। पंचमहाभूतों की उपस्थिति को पहचानने की अवधारणा प्राकृतिक संतुलन के विचार को मजबूत करती है।

निष्कर्ष और सिफारिशें-

वैदिक दृष्टिकोण से पर्यावरण संरक्षण की सतत अभ्यास की आवश्यकता है। शास्त्रों के अनुसार प्राकृतिक संसाधनों का संयमित उपयोग करना चाहिए। प्राचीन ज्ञान और परंपराओं को आधुनिक जीवन में समाहित करने की आवश्यकता है। दिनचर्या, संस्कारों और पूजा-पाठ में पर्यावरण चेतना को शामिल करना चाहिए। प्रकृति के प्रति आदर और सम्मान की भावना को बढ़ावा देना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची—

1. झा, शम्भु कुमार (डॉ.), वैदिकङ्मयस्येतिहासः (2012), जगदीश संस्कृत पुस्तकालय,जयपुर (राजस्थान)।

2. दाहालः, लोकमणि (आचार्य), संस्कृतसाहित्येतिहासः(2011), चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी।

3. त्रिपाठी, शिवसागर (डॉ.), वेदान्तसारः (2014), जगदीश संस्कृत पुस्तकालय, जयपुर (राजस्थान)।

4. पं. उपाध्याय, बलदेव, संस्कृत वाङ्मय का बृहद् इतिहास, उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ।

5. ईशादि नौ उपनिषद्, गीताप्रेस गोरखपुर।

6. Rangarajan, M. (2009). *Environmental issues in India: A Reader*. Pearson Education India.

7. Panikkar, R. (1994). *The Vedic experience: मन्त्रमञ्जरी: an Anthology of the Vedas for Modern Man and Contemporary Celebration*. Motilal Banarsidass Publ.

2024 TPJ | VOLUME 2, ISSUE 1
April - June | ISSN – 2584- 0517

भारतवर्ष एक चिन्तनशील राष्ट्र है। प्राचीनकाल से ही ऋषि-मुनियों ने अपने मस्तिष्क के आलोडन विलोडन से जनित ज्ञान को अनुभव की कसौटियो पर तराशकर भावी पीढ़ी तक पहुंचाया है। भाषा और लिपिज्ञान ने गुरुशिष्य की परम्परा में ईंधन का काम किया क्योंकि कागज के आविष्कार से पूर्व भारत में श्रुति परम्परा प्रचलित थी। श्रुति परम्परा एक ऐसी परम्परा है जिसमें आचार्य अपने शिष्यो को उदात्त-अनुदात्त- स्वरित आदि स्वरभेदों का ज्ञान हस्तसंचालन विधि द्वारा करवाते थे। फलतः यह सुदीर्घ वैदिक ज्ञान परम्परा आज भी अक्षुण्ण प्रचलित है। वेद मात्र धार्मिक ग्रन्थ ही नहीं है अपितु जनसामान्य के विभिन्न